TEXT FLY WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_180746
UNIVERSAL LIBRARY

वन्दना के बोल

*

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6/H28Va Accession No. G.H. 2506

Author हरिकृष्ण 'प्रेमी'।

Title बन्दना के बोल। 1952

This book should be returned on or before the date last marked below.

सादर समालोचनार्थ

बन्दना के बोल

वन्दना के बोल

*

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

प्रकाशक
रामलाल पुरी
आत्माराम एण्ड सन्स,
कश्मीरी गेट, दिल्ली।

मूल्य दो रुपए चार आने

मुद्रक
रामलाल पुरी
यूनिवर्सिटी ट्यूटोरियल प्रेस,
कश्मीरी गेट, दिल्ली।

सूची

शीर्षक		पृष्ठ संख्या
१	वंदना के बोल	१
२.	शुभागमन	३
३.	स्वर्ग का वरदान	५
४.	विश्व-प्राण	७
५.	पारस	९
६.	नवयुग की मुसकान	११
७.	युग-चेतना	१३
८.	जग-जीवन	१५
९.	मधुर मधुमास	१७
१०.	मन-मीत	१९
११.	जगद् गुरू	२१
१२.	अडिग	२३
१३.	अजेय	२५
१४.	विश्वास का विश्वास	२७
१५.	जागरण	२९
१६.	सत्याग्रही	३१
१७.	विनम्र दृढ़ता	३३
१८.	युग-प्रवर्तक	३५
१९.	आशा-गीत	३७
२०.	सर्वोदय	३९

२१. तुम्हारी चाह . . . ४१
२२. चर्खा-चक्र . . . ४३
२३. खादी की शक्ति . . . ४५
२४. हरिजन-बन्धु . . . ४७
२५. किसान-बन्धु . . . ४९
२६. मजदूर-मित्र . . . ५१
२७. नारी-उद्धारक . . . ५३
२८. आत्मबल . . . ५५
२९. विश्व-वासी . . . ५७
३०. प्रीत का निर्झर . . . ५९
३१. एकता का दूत . . . ६१
३२. सत्य का साथी . . . ६३
३३. मानव . . . ६५
३४. अव्यक्त तूफान . . . ६७
३५. स्वाधीनता का मोल . . . ६९
३६. नव-निर्माण . . . ७१
३७. चेतावनी . . . ७३
३८. राष्ट्र-पिता . . . ७५
३९. अवतार . . . ७७
४०. दिग्भ्रम . . . ७९
४१. स्वर-गंगा . . . ८१
४२. तम-हरण . . . ८३
४३. पुण्य का कमल . . . ८५
४४. प्रेमी . . . ८७
४५. मुक्तिदाता . . . ८९

४६. डगमग नैया . . . ६१
४७. अभय . . . ६३
४८. दीप-निर्वाण . . . ६५
४६. अमर जीवन . . . ६७
५०. मान हिन्दुस्तान का . . . ६६
५१. प्रेम का पुजारी . . . १०१
५२. स्वप्न-दर्शी . . १०३
५३. अंतिम दृश्य . . . १०५
५४. माली . . . १०७
५५. तम की ओर . . . १०६
५६. अमावस . . . १११
५७. चरण-चिह्न . . . ११३
५८. संवेदनामय . . . ११५
५६. प्रीत-पिचकारी . . . ११७
६०. यश-गान . . . ११६

क्यों ?

कवि की बाँसुरी ने वन्दना के बोल क्यों गाए ? प्रश्न करती हैं दिशाएं ?

गांधी को गए दो वर्ष से अधिक हो गए और अब कवि की साँसों से ये उच्छ्वास क्यों उमड़े ? प्रश्न करता है संसार का गणित ।

बापू के वंदनीय व्यक्तित्व ने स्वयं ही फूँक लगा दी है । कवि का अपने गीतों पर अधिकार नहीं है ।

काल यदि गांधी के अभाव के घाव को भर सकेगा तो कवि की बाँसुरी वंदना के बोल बोलना छोड़ देगी ।

गांधी गया, किंतु उसकी आवश्यकता नहीं गई; इसलिए कवि के उच्छ्वासों के बादलों ने उसकी तस्वीरें खींची हैं ।

एक दृश्य भी इन तस्वीरों में गांधी का इशारा पाकर प्रीत के पथ पर चलने का बल पा जायगा तो कवि की साँसें धन्य हो जायंगी ।

—प्रेमी

यमुना को

जिसके तट पर मोहन ने प्रीत की बंसी बजाई थी।
जिसके तट पर राजघाट बसा है,
जिसकी गोद में विश्व-हृदय का राजा सो रहा है,
जिसके वचन वायु में उड़ रहे हैं
और
जिसका जीवन जग-जीवन में बह रहा है।

वंदना के बोल

१. वंदना के बोल

वंदना के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

मौन थी उर-बाँसुरी
दी फूंक किसने सांस इसमें,
रन्ध्र मुखरित हो उठे हैं,
गीत मधुमय गा रहे हैं।

वंदना के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

ज़िंदगी में स्पर्श चरणों
का किया कब कवि-अहं ने,
आज उर-उच्छ्वास उनका
स्पर्श पाने जा रहे हैं।

वंदना के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

आज कवि के लोचनों में
कुछ अनोखी ज्योति चमकी,
कल्पना के लोक में दर्शन
किसी का पा रहे हैं।
वंदनों के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

चढ़ स्वरों की सीढ़ियाँ
आकाश पर कवि चढ़ गया है,
जिस जगह तारे हृदय के
गीत सुन मुसका रहे हैं।
वंदना के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

बज रहे हैं बोल व्याकुल
कवि-हृदय की धड़कनों में
स्वर जिसे गा कर अमर हों
गा वही गाथा रहे हैं।
वंदना के बोल प्राणों से
उमड़ते आ रहे हैं।

२. शुभागमन

कौन अम्बर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

जग भँवर में फँस गया,
पतवार टूटी, धैर्य छूटा,
कौन लहरों से निकल तब
आ गया नैया चलाने ?
कौन अंबर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

घोर गर्जन कर प्रलय का
वज्र टूटा जब गगन से,
कौन आया झेल उसको
विश्व का जीवन बचाने ?
कौन अंबर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

जब सुमन-दल झड़ चुके
मुरझा गई कलियाँ हृदय की,
कौन आया, बन मधुर
मधुमास उपवन को खिलाने।
कौन अंबर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

जल उठी छाती धरा की
तप्त किरणों से झुलस कर,
कौन घन बन आ गया घिर
प्यास पृथ्वी की बुझाने ?
कौन अंबर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

व्याप्त अग-जग की रगों में
विष हुआ भीषण घृणा का,
कौन मधुमय आ गया तब
प्रीत का प्याला पिलाने ?
कौन अंबर से उतर कर
आ गया भू को हँसाने ?

३. स्वर्ग का वरदान

आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

छा लिया था जब अँधेरे
ने जगत की ज़िंदगी को,
आ गई आकाश की
मुसकान पृथ्वी पर उतर कर।
आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

नाश की लपटें लपक
संसार को खाने लगीं, तब
ताप हरने आ गया—
कल्याण पृथ्वी पर उतर कर।
आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

सत्य के दो बोल सुनना
भी कठिन संसार में था,
आ गया तब सत्य का
जय-गान पृथ्वी पर उतर कर।

आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

जब नहीं चट्टान हिंसा
की हिली इंसान द्वारा,
आ गया तब प्रेम का
तूफान पृथ्वी पर उतर कर।

आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

दानवों ने मानवों को
कर दिया था जब पराजित,
आ गया प्रण पालने
भगवान पृथ्वी पर उतर कर।

आ गया था स्वर्ग का
वरदान पृथ्वी पर उतर कर।

४. विश्व-प्राण

विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

फूंक कितनी ही लगा लें
जगमगाता है न जीवन,
कोयलों की हैं खदानें
किंतु ज्वाला ही नहीं है।
विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

प्यास से आकाश आकुल,
प्यास से धरती तड़पती,
वाष्प दुनिया में बहुत, पर
मेघ-माला ही नहीं है।
विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

घूमता है विश्व में छल
प्यालियाँ लेकर ज़हर की,
पर सुधा का विश्व भर में
एक प्याला भी नहीं है।
विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

मूर्तियाँ तो ज़िंदगी की
दीखती अरबों धरा पर,
किंतु काया में किसी ने
प्राण ढाला ही नहीं है।
विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

एक था इंसान जग में,
एक ही था प्राण जग का
पर अभागे विश्व ने उसको
सँभाला ही नहीं है।
विश्व में आँखें बहुत हैं
पर उजाला ही नहीं है।

५. पारस

स्वर्ण-से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

युग-युगों से दृष्टि अंबर से
निरन्तर माँगती थी,
प्यास वसुधा की बुझाने
स्नेह था बरसा तुम्हारा।
स्वर्ण—से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

मेघ हो जाते कृपण हैं,
तुम कृपण होते नहीं थे,
दान देता था निरन्तर
उर सरोवर-सा तुम्हारा।
स्वर्ण—से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

सभ्यता का कंठ सूखा,
प्राण ही जाने लगे जब,
बह पड़ा व्यक्तित्व पर्वत
तोड़ निर्झर-सा तुम्हारा।
स्वर्ण—से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

विश्व भर में जब अँधेरा
ही अँधेरा छा रहा था,
ज्योति देने को उगा
अस्तित्व दिन कर-सा तुम्हारा।
स्वर्ण—से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

पूछता कवि चाँद—तारे
तो चमकते हैं गगन में,
छिप गया किन बादलों में
मुख मनोहर शुचि तुम्हारा।
स्वर्ण—से चमके हृदय
पा स्पर्श पारस-सा तुम्हारा।

६. नवयुग की मुसकान

मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकराया।

विश्व की साँसें पुरानी
पा गईं फिर श्वास नूतन,
ज़िंदगी की बाँसुरी ने
फिर नया ही गीत गाया।

मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकुराया।

थी खड़ी खारे जलधि के
तट तृषित तृष्णा जगत की,
प्यास प्राणों की बुझाने
प्रीत का झरना बहाया।

मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकुराया।

शस्त्र ने संसार में जीते
भयानक युद्ध कितने,
पर तुम्हारे आत्म-बल ने
शस्त्र-बल को भी हराया।
मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकुराया।

जो अभावों से ग्रसित थे,
जो प्रपीड़ित जुल्म से थे,
दे नया विश्वास उनको
जुल्म से तुमने बचाया।
मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकुराया।

क्रूर पतझड़ के करों ने
फूल-पत्ते नोच डाले,
आ गए मधुमास बन तुम
विश्व-उपवन को हँसाया।
मुसकुराहट में तुम्हारी
था नया युग मुसकुराया।

७. युग-चेतना

चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

देख दुनिया को व्यथित
तुम भी व्यथित होते रहे,
वंदना जग की तुम्हारी
वेदना में थी निहित।
चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

बात जो जग कह न पाया
तुम उसे कहते रहे,
भावना जग की तुम्हारी
भावना में थी निहित।
चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

विश्व-मन जो चाहता था
चाहते थे तुम वही,
प्रार्थना जग की तुम्हारी
प्रार्थना में थी निहित।
चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

विश्व-मन की साध को तुम
चाहते थे साधना,
साधना जग की तुम्हारी
साधना में थी निहित।
चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

चाहते तुम थे कि दुनिया
की विषमता नष्ट हो,
कामना युग की तुम्हारी
कामना में थी निहित।
चेतना युग की तुम्हारी
चेतना में थी निहित।

८. जग-जीवन

विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला।

जीर्णता की प्यास ने था
रक्त पृथ्वी का पिया,
किंतु फिर तेरी कृपा से
विश्व को यौवन मिला।
विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला।

शुष्क साँसों में न जग की
शेष थी इन्सानियत,
किंतु तेरी देह में
इन्सानियत को तन मिला।
विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला।

नाश के गहरे गढ़े में
सृष्टि थी गिरने लगी,
किंतु तेरी चाल में
अनजान परिवर्तन मिला ।
विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला ।

दासता को दूर करने
घर बनाया जेल को,
बंधनों को तोड़ने में
था तुझे बंधन मिला ।
विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला ।

प्रीत की भोली अहिल्या
बन शिला, पथ पर पड़ी,
जी उठी फिर स्पर्श तेरा
जब पतित-पावन मिला ।
विश्व को जीवन मिला,
जिस क्षण तुझे जीवन मिला ।

९. मधुर मधुमास

विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

था दिशाओं में निराशा
का अँधेरा खूब गहरा,
सूर्य नवयुग का निराली
रश्मियों का हास लाया।
विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

प्रीत के शव को जलाने
चल पड़ा दल दानवों का,
किंतु शव को प्राण देने
तू नया ही श्वास लाया।
विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

कर दिया आकाश काला
इस धरा के पातकों ने,
कालिमा को दूर करने
तू नया आकाश लाया।
विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

हार कर हैवान से
इंसान बंधन में पड़ा था,
बंधनों को तोड़ने को
तू अटल विश्वास लाया।
विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

शीश कितने कट चुके थे
पर न आती थी निकट जो,
मानिनी स्वाधीनता को
तू मना कर पास लाया।
विश्व के उद्यान में तू
था मधुर मधुमास लाया।

१०. मन-मीत

चन्द्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू!

बोलते भोंपू मिलों के
हार्न बजते मोटरों के
पर न देता था सुनाई
शांति का संगीत, बापू!
चंद्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू!

सिंधु में लहरें थिरकती,
नाचते थे घन गगन में,
पर न मानव की नज़र में
झाँकती थी प्रीत, बापू!
चन्द्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू!

दर्प से विज्ञान कहता
नाश दुनिया का करूँगा,
सोचती थी ज़िंदगी, कैसे
सकेगी जीत, बापू !
चन्द्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू !

नीति को दुर्नीति शीशे
की तरह थी तोड़ देती,
थी विवश आँसू बहाती
सभ्यता भयभीत, बापू !
चन्द्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू !

सत्य को चमका दिया मृदु
प्रीतमय तेरी नज़र ने।
पा गया था जग तुझे पा
शक्ति आशातीत, बापू !
चन्द्रमा-सा था चमकता
आ गया मन-मीत, बापू !

११. जगद्गुरु

हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

मौत से इंसान डर कर
भागता संग्राम से था,
किंतु तूने मौत में भी
रूप जीवन का दिखाया।
हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

"है अमर आत्मा तुम्हारी"
कृष्ण के जग बोल भूला,
मंत्र गीता का पुनः
संसार को तूने सुनाया।
हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

'वार करना क्रूरता है,
वार सहना शूरता है।'
मानवों को यह नया ही
पाठ था तूने पढ़ाया।

हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

'जुल्म के आगे न झुकना,
पर न रिपु पर जुल्म करना।'
सत्य पर आरूढ़ रहने
का नया ही पथ बताया।

हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

जुल्म करके जीत जाना
हार है इंसानियत की,
जय-पराजय का निराला
अर्थ था तूने लगाया।

हास को तूने रुलाया,
आँसुओं को था हँसाया।

१२. अडिग

विश्व के पग डगमगाए
पर नहीं तू डगमगाया।

थक गई विद्युत जगत की
मिट न पाया तम हृदय का,
सत्य के पथ को दिखाने
के लिए दीपक जलाया।
विश्व के पग डगमगाए
पर नहीं तू डगमगाया।

दीप अपने हाथ में ले
चीरता तम को चला तू,
की न चिंता यदि बुझाने
को प्रबल तूफ़ान आया।
विश्व के पग डगमगाए
पर नहीं तू डगमगाया।

सूर्य–शशि ने मुँह छुपाया
हो गईं काली दिशाएँ,
विश्व को देने सहारा
दीप बन तू मुसकुराया !
विश्व के पग डगमगाए,
पर नहीं तू डगमगाया।

ज्वार हिंसा का उठा,
था लक्ष्य से भटका ज़माना,
किंतु तूने प्रीत-पथ से
पग नहीं पीछे हटाया।
विश्व के पग डगमगाए,
पर नहीं तू डगमगाया।

विश्व में आँखें अगर हैं
तो उजाला भी यहीं है,
ज्योति का अन्तर्जगत में
स्रोत तूने था दिखाया।
विश्व के पग डगमगाए,
पर नहीं तू डगमगाया।

१३. अजेय

मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

उधर साम्राज्य की सत्ता,
इधर जनता दुखी-दुर्बल,
हुआ चट्टान से टक्कर
लगाने में न शंकित तू।
मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

व्यथाएँ दीं बहुत रिपु ने,
सताया देश ने भी, पर
रहा सहता खुशी से तू,
रहा श्रम से अपरचित तू।
मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

निराशा की घटाओं ने
किया आकाश को काला,
चलाता तीर किरणों के
हुआ रवि-सा प्रकाशित तू।
मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

बहुत चाहा कि स्वर तेरे
सुनाई दें न दुनिया को,
हुआ प्राचीर को भी
चीर कर जग में निनादित तू।
मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

युगों की दासता की जड़
हिलादी एक झटके में,
गया है मुक्ति का मृदुफल
मुदित मन कर समर्पित तू।
मिली रिपु को विजय, फिर भी
न हो पाया पराजित तू।

१४. विश्वास का विश्वास

हर सांस की था सांस तू,
विश्वास का विश्वास तू।

जो जुल्म की चट्टान के
नीचे दबे नीरव रहे,
उन मूक पीड़ित प्राणियों का
बन गया उच्छ्वास तू।
हर सांस की था सांस तू
विश्वास का विश्वास तू।

थे प्राण पीड़ा से प्रताड़ित,
वेदना से मन ग्रसित
तब आगया जग को लुटाने
के लिए उल्लास तू।
हर सांस की था सांस तू
विश्वास का विश्वास तू।

जिन का न कोई विश्व भर में,
बे सहारे, त्रस्त जन,
था दूर करने आ गया
उनके हृदय का त्रास तू।
हर सांस को था सांस तू,
विश्वास का विश्वास तू।

थे प्रात फीके हो चुके,
उल्लास फूलों में न था,
हतप्रभ जवानी को हँसाने
आ गया मधुमास तू।
हर सांस की था सांस तू,
विश्वास का विश्वास तू।

था धीर धरती-सा, गगन-सा
था गहन गंभीर तू,
आधार अवनी का बना,
आकाश का आकाश तू।
हर सांस की था सांस तू,
विश्वास का विश्वास तू।

१५. जागरण

राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

'मुक्त होंगे या मरेंगे।'
कर लिया प्रण सैनिकों ने,
एक स्वर होकर समर का
गीत भारत ने गुँजाया।
राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

दश दिशाओं में तरंगित
हो उठी पागल जवानी,
देश के इस छोर से उस
छोर तक तूफ़ान आया।
राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

ज़ुल्म का मन थरथराया,
कांपने हिंसा लगी, जब
नारियों ने आ समर में
राष्ट्र का झंडा उठाया।

राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

बालगण ने भी कहा, "क्यों
हम रहें पीछे किसी से।"
बाल-सेना को निरख कर
बाल-रवि भी मुसकुराया।

राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

मिल गया संकेत तेरा
हो गए तत्पर सिपाही,
बढ़ चले सब के कदम
जिस क्षण कदम तूने बढ़ाया।

राष्ट्र जागा, जागरण का
शंख जब तूने बजाया।

१६. सत्याग्रही

शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

बिंदुओं को कर इकट्ठा,
सिंधु तूने भर दिया।
रोकने पर जोश का
तूफ़ान तो बढ़ता गया।
शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

मानवों के मन-गगन में
थे निराशा-घन घिरे,
ज्योति जन-मन में जगी,
जग में उजाला छा गया।
शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

राष्ट्र की नैया न उभरी,
थक गए केवट सभी,
आ गया मल्लाह बन तू
तो किनारा आ गया।
शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

जिस अजय बल से समर में
हार हिटलर भी गया,
वह चतुर अंग्रेज तुझ से
मात पैदल खा गया।
शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

तोड़ डालीं टहनियों सी
दासता की बेड़ियाँ,
जय हुई बलिदान की
अभिमान तब शरमा गया।
शस्त्र सत्याग्रह विनय-मय
जय अनय पर पा गया।

१७. विनम्र दृढ़ता

स्वर नरम नवनीत-सा पर
वज्र सी दृढ़ बात थी।

साँस सौरभमय तुम्हारी
सान्त्वना-सी स्निग्ध थी,
किंतु करने को अनय का
नाश झंझावात थी।

स्वर नरम नवनीत-सा, पर
वज्र सी दृढ़ बात थी।

दृष्टि थी प्यारी तुम्हारी
प्रीत सी, वरदान सी
पर अघों का खेत करने
त्वार उल्कापात थी।

स्वर नरम नवनीत-सा, पर
वज्र सी दृढ़ बात थी।

चाँदनी-सी स्मिति तुम्हारी
थी मधुर ममतामयी,
किंतु पशुता को मिटाने
को प्रलय की रात थी।

स्वर नरम नवनीत सा, पर
वज्र सी दृढ़ बात थी।

ज़िन्दगी उज्वल तुम्हारी
जग-प्रपंचों से पृथक्,
पंकमय जग के सरोवर
में विमल जलजात थी।

स्वर नरम नवनीत सा, पर
वज्र-सी दृढ़ बात थी।

विश्व का शव जी उठा
सुनकर तुम्हारे गीत को,
जान पड़ता था सुधा की
हो रही बरसात थी।

स्वर नरम नवनीत सा, पर
वज्र-सी दृढ़ बात थी।

१८. युग-प्रवर्तक

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

भूल जग कर्तव्य को
अधिकार-लिप्सा में फँसा,
त्याग, संयम,—तर्क की, दी
चेतना अधिकार को।

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

विश्व पर शासन युगों से
क्रूर हिंसा का रहा,
किंतु तूने विश्व का शासक
बनाया प्यार को।

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

दास रखना चाहते थे
शस्त्र मानव को सदा,
तुच्छ तूने कर दिया है
तोप को, तलवार को।

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

बंधनों की विश्व भर में
टूटने कड़ियाँ लगीं,
हार खानी पड़ गई है
प्यार से संहार को।

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

प्राप्त कर अनमोल मोती
गर्व वसुधा को हुआ,
मृत्यु तुझको ले गई है
स्वर्ग के शृंगार को।

युग-प्रवर्तक, युग दिया
तूने नया संसार को।

१९. आशा-गीत

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

"क्यों भटकता है जगत"
तूने कहा, "तम सिंधु में,
पार तरणी को लगा,
पतवार ले विश्वास की।"

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

"देखकर बर्बाद उपवन
हो दुखी मन में नहीं
कुँज में मधुमय बहेगी
फिर हवा मधुमास की।"

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

"हैं क्षणिक दुख की घटाएँ
रीत जाएँगी अभी,
डर रहा मन बिजलियों से
किसलिए आकाश की ?"

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

"जुल्म मानव को बनाकर
दास रख सकता नहीं,
इति अगर मिल जाय
मानव को निराशा-पाश की।"

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

बोल तेरे गीत के अब भी
जगत में गूँजते,
मौत तेरी जिंदगी को
क्या निगलकर खा सकी ?

गीत आशा का सुनाया
बाँसुरी से श्वास की।

१०. सर्वोदय

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

झोंपड़ी कुछ उठ सके,
कुछ झुक सके ऊँचा महल,
कुछ कड़ा सरिता हृदय हो,
कुछ द्रवे पाषाण का।

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

साधना तेरी रही
सुख-शाँति हो संसार में,
लाभ सारा विश्व पाए
मुक्ति के वरदान का।

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

सर्प सा मानव न धन पर
बैठ रखवाली करे,
बन जलद धन-जल
लुटाना धर्म है इंसान का।

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

कौन है ऊँचा यहाँ पर
कौन है नीचा यहाँ,
ध्यान हो आकाश को भी
भूमि के सम्मान का।

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

स्वार्थ, हिंसा लोभ से
इंसान यदि अँधा न हो,
तो उसे मिल जाय सत्पथ
विश्व के कल्याण का।

पा सके प्रत्येक मानव
पथ खुला उत्थान का।

२१. तुम्हारी चाह

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला ।

भाँति शंकर के स्वयं
पीकर हलाहल विश्व भर का,
चाहते थे तुम पिलाना
विश्व को पीयूष-प्याला ।

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला ।

विषधरों को भी गले का
हार था तुमने बनाया,
डस तुम्हें सकता नहीं था
वासना का नाग काला ।

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला ।

ज्ञान की गंगा तुम्हारे
शीश से उतरी जगत में,
शांत करने को अखिल
संसार की अभिशाप-ज्वाला।

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला।

भंग करते तप तुम्हारा
काम ने छोड़े सुमन-शर,
खोल संयम नेत्र तुमने
कर मदन को क्षार डाला।

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला।

बाँधकर केवल लँगोटी
कीर्ति का परिधान पहना,
त्याग के कैलास पर चढ़
तप किया तुमने निराला।

चाहते थे तुम निरंतर
हर हृदय में हो उजाला।

११. चर्खा-चक्र

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

मारने में वह निपुण था,
यह जिलाने में सफल है,
राष्ट्र की सम्पत्ति है यह,
बेसहारों का सहारा।

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

भूल बैठे जब इसे हम
तब गिरी बिजली गगन से,
जब इसे अपना लिया तब
देश का चमका सितारा।

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

था मशीनों में उलझता
जा रहा संसार का मन,
तब चला चर्खा तुम्हारा
बन गया मन का दुलारा।

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

आत्म-निर्भर देश हो यदि
धन विदेशों में न जाए,
पा सकेगा यह तभी
दारिद्र्य-सागर का किनारा।

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

गीत इससे गूँजता है
जीत का, उत्थान का शुभ,
सान्त्वना देती मधुर
संगीत की पीयूष-धारा।

है अधिक गतिमय सुदर्शन
चक्र से चर्खा तुम्हारा।

१३. खादी की शक्ति

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

वस्त्र जो अपने बना ले
अन्न भी उपजा सके जो,
आत्म-निर्भर जाति दुनिया
में किसी से डर न सकती।

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

व्रत स्वदेशी का लिया
आजाद दिल से हो गए तब,
लग गई ऐसी लगन जो
है दमन से मर न सकती।

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

खींचते ही जायँ धन
परदेशियों के हाथ जिससे,
कह गया बनिया हिसाबी
वह तिजोरी भर न सकती।

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

चाँदनी सी श्वेत खादी
मान पाती जो स्वयं हो,
रेशमी चादर नरम वह
पा कभी आदर न सकती।

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

युग-युगों की सहचरी को
छोड़ देते हम नहीं यदि,
तो कभी इस देश की
सम्पत्ति जा बाहर न सकती।

काम खादी ने किया जो
काम आँधी कर न सकती।

१४. हरिजन-बन्धु

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

'ईश के सब पूत पावन,
है बड़ा-छोटा न कोई।'
फिर बताया हिन्दुओं को
चिर पुरातन ज्ञान तूने।

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

'कर्म कोई है न ऊँचा,
कर्म कोई है न नीचा।'
उच्च वर्णों के हृदय का
कम किया अभिमान तूने।

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

हरिजनों की बस्तियों में
वास करता था स्वयं तू,
न्याय-संगत दीन-दलितों
को दिया उत्थान तूने।

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

मंदिरों में ले गया,
अस्पृश्यता की जड़ हिलादी,
वेद-मंत्रों का सुनाया
हरिजनों को गान तूने।

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

रूढ़ियों को पालना ही
धर्म भोलेजन समझते,
मर्म बतला धर्म का
सद्धर्म को दी जान तूने

मानवोचित हरिजनों को
फिर दिलाया स्थान तूने।

१५. किसान-बन्धु

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

"अन्न-दाता विश्व-भर का
है स्वयं भूखा बिलखता,
छीन लेते हैं उपज को
भूमिपति, धनवान भक्षक ।"

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

"शांति शहरों में न होगी,
सुख न सरसेगा धरा पर,
ग्राम्य जनता को बनाओगे
नहीं श्रीमान जब तक ।"

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

"हैं कृषक जब तक दुखी
दारिद्र्य के मारे, मरे-से,
देश अपना बन सकेगा
किस तरह बलवान तब तक ?"

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

मार्ग दिखला कर नया
नेतृत्व को आँखें नई दीं,
संकटों के मूल पर थे
दे न पाए ध्यान अब तक ।

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

"सभ्यता की शान हैं जो,
ज्ञान के अभिमान हैं जो,
उन किसानों को उपेक्षित
रख जियेंगे प्राण कब तक ?"

तू किसानों का हितैषी,
मार्ग-दर्शक, प्राण-रक्षक ।

२६. मज़दूर-मित्र

बन स्वयं मज़दूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

'नींव के दृढ़ पत्थरों का
मोल महलों ने न जाना।
याद रख बुनियाद को भी।'
गीत महलों को सुनाया।

बन स्वयं मज़दूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

'विश्व के आधार हो हैं
क्यों निराश्रित, स्नेह-वंचित,
दो उन्हें अधिकार उनके।'
पाठ पूँजी को पढ़ाया।

बन स्वयं मज़दूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

"बुद्धि की भी है जरूरत,
माँग श्रम की भी जगत में।"
बुद्धि का अभिमान कम कर
बुद्धि को श्रम से मिलाया।

बन स्वयं मजदूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

"शत्रु पूँजी का न श्रम है,
कम न पूँजी से परिश्रम,
मोल दोनों का बराबर।"
मेल दोनों में कराया।

बन स्वयं मजदूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

"प्राप्त हो मजदूर को सुख
शांति से भरपूर जीवन,
राष्ट्र का बल है श्रमिक-दल।"
यह प्रबल नारा गुँजाया।

बन स्वयं मजदूर तूने
मान श्रम का है बढ़ाया।

१७. नारी-उद्धारक

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

युद्ध में स्वाधीनता के
चल पड़ीं सुकुमारियाँ भी,
जो न घूँघट भी उठातीं,
बन गईं वह वीर बाला।

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

क्रांति सामाजिक स्वयं ही
हो गई, प्रतिफल समर का,
एक झटके में युगों की
रूढ़ियों को तोड़ डाला।

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

लाठियाँ खाईं खुशी से,
गोलियाँ झेलीं मुदित-मन,
छोड़ भवनों को किया
स्वीकार कारागार काला।

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

राख से मुँह ढक पड़ी थीं
दीन-दुर्बल-सी, बुझी-सी,
जल उठीं चिनगारियाँ फिर
बन गईं नक्षत्र-माला।

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

जो हुईं उत्पन्न तम में
जो अँधेरे में पली थीं
प्राप्त कर आशीष तुझसे
बन गईं जग का उजाला।

नारियों को था घरों की
क़ैद से तूने निकाला।

१८. आत्म-बल

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा ।

जुल्म को अभिमान है
संहारकारी शक्ति का,
पर, "अटम बम से प्रबल
बलिदान है" तूने कहा ।

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा ।

" त्याग, तप, संयम, अहिंसा,
सत्य, मानव के विभव,
जिस हृदय में थे नहीं,
निष्प्राण है " तूने कहा ।

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा ।

"तू अकेला हो भले ही,
पर अनय से युद्ध कर,
निर्बलों के साथ में
भगवान है" तूने कहा।

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा।

"दूसरों के दुःख से दुखता
न दिल जिसका कभी,
स्वार्थ-रत इंसान वह
हैवान है" तूने कहा।

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा।

"शत्रु कोई भी न तेरा,
शत्रु अपना आप तू।
जड़ पराजय की स्वयं
अभिमान है" तूने कहा।

"देह-बल से आत्म-बल
बलवान है" तूने कहा।

१९. विश्व-वासी

एक भारत ही नहीं
संसार-भर है देश तेरा ।

शत्रु ने मस्तक झुकाया,
मित्र ने गोली चलाई,
गोलियों के घाव हँसकर
कह गए आदेश तेरा ।

एक भारत ही नहीं
संसार-भर है देश तेरा ।

जिंदगी - भर ज़ुल्म से
अविरत किया संग्राम तूने,
पर किसी भी व्यक्ति से
तिल-भर न था विद्वेष तेरा ।

एक भारत ही नहीं
संसार-भर है देश तेरा ।

विश्व को संदेश तेरा
"प्रीत अणु-बम से प्रबल है।"
जग न समझा, दोष इसमें
है नहीं लव - लेश तेरा ।

एक भारत ही नहीं
संसार-भर है देश तेरा ।

हो गया तन मुक्त, लेकिन
मन फँसा है बंधनों में,
दास - मन क्या कर सकेंगे
काम अब अवशेष तेरा ?

एक भारत ही नहीं
संसार - भर है देश तेरा ।

चाहते कितना कि तेरी
राह पर चलते चलें हम,
किंतु प्राणों को मिलेगा
किस तरह आवेश तेरा ?

एक भारत ही नहीं
संसार-भर है देश तेरा ।

३०. प्रीत का निर्झर

स्वार्थ से लड़ता रहा तू,
त्याग, तप, करता रहा तू।

की स्वयं स्वीकार तूने
वेदना सारे जगत् की,
दीन बन खुद, दीनता
संसार की हरता रहा तू।

स्वार्थ से लड़ता रहा तू,
त्याग, तप, करता रहा तू।

वैरियों का भी न तूने
नाश चाहा स्वप्न में भी,
पुण्य का पावन पुजारी
पाप से डरता रहा तू।

स्वार्थ से लड़ता रहा तू,
त्याग, तप, करता रहा तू।

"धर्म के शुचि नाम पर
तुम ख़ून की होली न खेलो।"
ज़ोर से तूने कहा, "लोहू
नहीं कोई बहाए।"

एकता को प्राण देने
प्राण भी तूने लुटाए।

"एक जननी के सपूतों
में परस्पर द्वेष क्यों हो ?
बढ़ चलें पथ पर प्रगति के,
प्रीत का रवि मुसकुराए।"

एकता को प्राण देने
प्राण भी तूने लुटाए।

"देश भारत है सुविस्तृत,
साधनों से पूर्ण, श्रीयुत,
विश्व का गौरव बने, यदि
मेल करना सीख पाए।"

एकता को प्राण देने
प्राण भी तूने लुटाए।

३१. सत्य का साथी

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

नाचती थी नग्न हिंसा
हाथ में खप्पर लिये, तब
प्राण की बाजी लगाकर,
आन पर अड़ता रहा तू।

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

मानवों का खून पीकर
भूमि पागल हो उठी, तब
प्रीत की बंसी बजाता
विश्व में बढ़ता रहा तू।

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

बंधुओं पर बंधु टूटे
तानकर तलवार तीखी,
झेलने को वार घातक
बीच में पड़ता रहा तू।

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

फूल-सा कोमल हृदय
चट्टान-सा प्रण पर अटल था,
इसलिए ही ज़ालिमों की
दृष्टि में गड़ता रहा तू।

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

शील, नैतिकता भुलाकर
गर्त में मानव गिरे, तब
प्रीत के ऊँचे शिखर पर
बेधड़क चढ़ता रहा तू।

सत्य का साथी रहा तू,
झूठ से लड़ता रहा तू।

३३. मानव

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

"विश्व को उपदेश दे मत,
बच स्वयं ही पाप से।
साफ़ कर काले हृदय को
अश्रुओं के नीर से।"

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

"हो अकेला ही भले तू
सत्य का पथ छोड़ मत,
सत्-व्रती डरता नहीं
रूठी हुई तकदीर से।"

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

"दासता की बेड़ियों को
तोड़ना भी था कठिन,
तोड़ना उससे कठिन है
स्वार्थ की ज़ंजीर को।"

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

"सत्य का साधक मही पर
एक भी जीवित रहा,
विश्व की तक़दीर देगा
वह बदल तदबीर से।"

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

"डर नहीं सैनिक सितम से,
रह अटल निज आन पर,
हार जाएगा अनय भी
त्याग की तासीर से।"

कह गया तू, "वह न मानव
जो न परिचित पीर से।"

३४. अव्यक्त तूफ़ान

अश्रु आँखों से न टपके,
पर उठा तूफ़ान दिल में।

सहचरी की भी विदाई
पर धरा तूने न सींची,
पर सदा गाता रहा था
तू विरह का गान दिल में।

अश्रु आँखों से न टपके
पर उठा तूफ़ान दिल में।

कंटकों की राह पर
सहधर्मिणी को भी चलाया,
क्रूर ऊपर से रहा, पर
था किया सम्मान दिल में।

अश्रु आँखों से न टपके
पर उठा फ़ान दिल में।

बन गया सेवा-व्रती तो
बन गया घर भी तपोवन,
प्यार ओठों पर न थिरका,
थी मधुर मुसकान दिल में।

अश्रु आँखों से न टपके,
पर उठा तूफ़ान दिल में।

विश्व को तो दीखता था
हड्डियों का शुष्क ढाँचा,
पर रहा हरदम प्रफुल्लित
प्रीत का उद्यान दिल में।

अश्रु आँखों से न टपके,
पर उठा तूफ़ान दिल में।

नम्रता तेरी धरा की
धूल को भी चूमती थी,
किंतु फिर भी देश का
तुझको रहा अभिमान दिल में।

अश्रु आँखों से न टपके
पर उठा तूफ़ान दिल में।

३५. स्वाधीनता का मोल

राष्ट्र से तुमने कहा,
"स्वाधीनता का मोल जानो।"

"किस तरह स्वच्छंदता की
गति नियंत्रित हो सकेगी,
यदि नहीं अधिकार को
कर्तव्य से तुम तोल जानो।"

राष्ट्र से तुमने कहा,
"स्वाधीनता का मोल जानो।"

"आत्म-निर्भर हो न पाए
तो गुलामी फिर ग्रसेगी,
गूँजता मन के गगन में
सत्य उसके बोल मानो।"

राष्ट्र से तुमने कहा,
"स्वाधीनता का मोल जानो।"

"है समय के साथ तुमको
ज़िंदगी की गति बदलनी,
गाँव की गलियाँ निहारीं,
विश्व का भूगोल जानो।"

राष्ट्र से तुमने कहा,
"स्वाधीनता का मोल जानो।"

"अब पुरानी रूढ़ियों के
दायरे मिटकर रहेंगे,
विश्व-भर में अब नया युग
ला रहा भू-डोल जानो।"

राष्ट्र से तुमने कहा,
"स्वाधीनता का मोल जानो।"

"स्वर्ग की चाबी समय ने
दी तुम्हारे हाथ में है,
स्वर्ग-सुख तुम पा सकोगे
द्वार को यदि खोल जानो।"

"राष्ट्र से तुमने कहा,
स्वाधीनता का मोल जानो।"

३६. नव-निर्माण

"है सरल विध्वंस करना,
पर कठिन निर्माण करना।"

देख लोलुपता हमारी
हो दुखी कहते रहे तुम,
"मुक्त होकर भी न जाना,
मुक्ति से पहचान करना।"

"है सरल विध्वंस करना
पर कठिन निर्माण करना।"

"यह न समझो युद्ध जीता
प्राप्त कर स्वाधीनता को,
है तुम्हें लड़कर अहं से
राष्ट्र का उत्थान करना।"

है सरल विध्वंस करना
पर कठिन निर्माण करना।"

"देश का प्रत्येक प्राणी
चाहता अब ताज सिर पर,
प्राप्त कर सीखा नहीं है
स्वार्थ का बलिदान करना।"

"है सरल विध्वंस करना,
पर कठिन निर्माण करना।"

"दुधमुँही स्वाधीनता है
और तुम लड़ते परस्पर,
इस तरह संभव नहीं है
देश को बलवान करना।"

"है सरल विध्वंस करना,
पर कठिन निर्माण करना।"

"धैर्य से, तप-त्याग से ही
तुम नया युग ला सकोगे।
धर्म है इंसान का
इंसान का सम्मान करना।"

"है सरल विध्वंस करना,
पर कठिन निर्माण करना।"

३७. चेतावनी

"है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना ।"

राष्ट्र से तूने कहा, "है
क्रोध निर्बलता हृदय की,
स्वार्थ है संताप की जड़,
शील है अनमोल गहना ।
है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना ।

यह न समझो मुक्ति पाकर
कर चुके कर्तव्य पूरा ।
देश को श्री, शक्ति देने
के लिए है कष्ट सहना ।
है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना ।

देश को बलयुक्त करने
यदि न संयम से चले हम
काल देगा दासता की
फिर हमें ज़ंजीर पहना।
है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना।

भीत हो कानून से मन
राह पर आता नहीं है,
अग्रसर होता कुपथ पर
वासना का मान कहना।
है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना।

मानकर आदेश तेरा
ले अहिंसा-पथ ग्रहण कर
बंद होगा भूमि पर तब
मानवों का रक्त बहना।
है सरल आज़ाद होना,
पर कठिन आज़ाद रहना।

३८. राष्ट्र-पिता

विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

दीन-दुखियों के हृदय की
वेदना का धन समेटे,
थी गगन में उड़ रही
बनकर गहन घन आह तेरी।

विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

"धन नहीं है श्रेष्ठतम धन,
मन ग्रहण कर त्याग का धन।"
भूल हम संदेश तेरा,
छोड़ बैठे राह तेरी।

विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

तरु-तले जैसे पथिक को
ग्रीष्म में है शांति मिलती,
इस व्यथित जग के लिए थी
सान्त्वनामय छाँह तेरी।
विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

राष्ट्र का बनकर पिता तू
था चलाता बालकों को,
पड़ गए हैं फिर भँवर मे
छोड़कर हम बाँह तेरी।
विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

विश्व-भर को संकटों से
पार करने को विकल था,
पर अभागे विश्व ने ही
की नहीं परवाह तेरी।
विश्व में आनंद बरसे,
थी यही शुचि चाह तेरी।

३६. अवतार

युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

अघों के बादलों में छिप
न दिखता पुण्य का रवि जब,
चला आता पवन सावेग
करने दूर अँधियारी ।

युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

बनाकर रूप मानव का
स्वयं करुणा चली आती,
जगत में साधुता को जब
सताते हैं दुराचारी ।

युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

सतत निश्शस्त्र रहकर ही
हराया हिंसकों को भी,
नहीं था चक्र हाथों में,
नहीं था तू धनुर्धारी ।
युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

विदेशी शक्ति ने हमको
रखा था बाँध सदियों से,
दिये हैं तोड़ दृढ़ बंधन,
मनुज तू था चमत्कारी ।
युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

अभागिन मूर्ख हिंसा ने
बुझाया पुण्य का दीपक,
व्यथित हो रो पड़ा अंबर,
दुखी दुनिया हुई सारी ।
युगों के बाद आता है
पुरुष आदर्श अवतारी ।

४०. दिग्भ्रम

किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

भावना ले त्याग की हम
थे बने सेवा-व्रती,
किंतु सत्ता प्राप्त कर हम
होश बिसराने लगे ।

किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

दो दिवस भी हम निभा
पाए प्रतिज्ञाएं नहीं,
लालसा की पूर्ति में दिल
आज बहलाने लगे ।

किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

एकता का पाठ दुनिया
को पढ़ाने थे चले,
किंतु आपस में स्वयं हम
आज टकराने लगे।
किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

शीश भी हँसकर चढ़ा दें,
थी हमारी कामना,
किंतु चाँदी की चमक से
आज चकराने लगे।
किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

हाथ हम तेरा पकड़ कर
चल सके थे मार्ग कुछ,
हाथ तेरा छोड़कर अब
ठोकरें खाने लगे।
किस तरफ़ जाना हमें था,
किस तरफ़ जाने लगे ?

४१. स्वर-गंगा

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार-से।

दीन-दुखियों ने पुकारा
भूप भागीरथ सुदृढ़,
आ गए जग को बचाने
पातकों के भार से।

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार-से।

शांत मुद्रा में तुम्हारी
शक्ति थी सम्मोहिनी,
जो कि अत्याचार को भी
जीत लेती प्यार से।

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार-से।

पीड़ितों से भी कहा, "मत
दुष्ट की हत्या करो,
दुष्टता की भावना को
मार दो उपकार से।"

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार - से।

"वार करना व्यर्थ है
भयभीत होकर नाग पर,
नाग के मन को नचाओ
प्रीत की झंकार से।"

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार - से।

चल दिए तुम तो जगत मे
मोह - ममता तोड़कर,
पर न जा सकते अमृतमय
बोल इस संसार से।

बोल बहते हैं तुम्हारे
जाह्नवी की धार - से।

४१. तम-हरण

दूर तम तूने किया
संसार के अंतःकरण से।

ताड़ना मानव-हृदय को
मार्ग पर लाती नहीं है,
किंतु देता सत् पुरुष जग
को बदल शुचि आचरण से।
दूर तम तूने किया
संसार के अंतःकरण से।

चूम ले मन तारिकाओं
को मगर तृष्णा न बुझती,
प्यास तो बुझती हृदय की
वासना के संवरण से।
दूर तम तूने किया
संसार के अंतःकरण से।

भाग्य का निर्माण कर ले
नर स्वयं पुरुषार्थ करके,
पार कर सकता प्रबल
तूफ़ान साहस-संतरण से।
दूर तम तूने किया
संसार के अंत:करण से।

प्रात-संध्या तो जगत में
रोज़ होते ही रहेंगे,
सूर्य नवयुग का उगेगा
किंतु जन-मन-जागरण से
दूर तम तूने किया
संसार के अंत:करण से।

ज़िंदगी के भेद दुनिया
को बताता ही रहा तू,
जो न जीवन से सुना वह
सुन लिया तेरे मरण से।
दूर तम तूने किया
संसार के अंत:करण से।

४३. पुण्य का कमल

तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था ।

पापियों से भूलकर भी
की घृणा तूने नहीं थी,
किंतु पापों को मिटाने
के लिए घातक गरल था ।

तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था ।

वासना के नीर से तालाब
दुनिया का लबालब,
किंतु इस तालाब में तू
पुण्य का पावन कमल था ।

तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था ।

कालिमा की कोठरी
प्रत्येक तूने देख ली थी,
कालिमा के बीच बसकर
तू धवलता-सा धवल था ।
तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था।

पार तुझसे पा सकी कब
चाल भी चालाकियों की,
पर अचंभा तो यही है
तू सरलता-सा सरल था ।
तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था ।

वज्र अंबर से गिरे, या
आग पृथ्वी से प्रकट हो,
धैर्य विचलित धैर्य का हो,
किंतु प्रण पर तू अटल था।
तू हिमालय-सा अचल था,
किंतु सरिता-सा तरल था।

४४. प्रेमी

चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना ।

दिल हुआ इंसान का
पाषाण-सा निर्मम कठिन,
किंतु तुम पाषाण को थे
चाहते नवनीत करना ।

चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना ।

"चोट खाकर मुसकराओ,
और रण में रत रहो तुम ।"
तुम सिखाना चाहते थे
हार को भी जीत करना ।

चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना ।

बालुका बन बह चली
चट्टान धारा में तुम्हारी,
जानते तुम शत्रुता को
मार रिपु को मीत करना।
चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना।

सर्प डसना भूल जाता,
सिंह तलुए चाटता है,
विश्व का मन जीत लेता
जानता जो प्रीत करना।
चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना।

था तुम्हें विश्वास आत्मा
की अमरता पर हमेशा,
दंड देकर भी असंभव
था तुम्हें भयभीत करना।
चाहते थे तुम जगत के
शोर को संगीत करना।

४५. मुक्ति-दाता

दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

हो गए आज़ाद कैसे
है अचंभा खुद हमें,
है हृदय शंकित, न फिर से
बाँध लें बंधन हमें ।
दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

दासता को दूर करने
का न मिलता मार्ग था,
दे दिया तूने अहिंसा
का सफल साधन हमें ।
दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

हो जरा से जर्जरित हम
थे बुलाते मृत्यु को,
गात आशा का सुना तू
दे गया यौवन हमें ।
दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

"कष्ट सहने में बड़ा
आनंद है" तूने कहा,
गोलियाँ लगने लगीं
तब से सुमन-वर्षण हमें ।
दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

प्राण देने को विकल थे
मुक्ति पाने के लिए,
क्या न फिर वह मिल सकेगा
जोश - पागलपन हमें ।
दे गया तू कर दया
स्वाधीनता का धन हमें ।

४६. डगमग नैया

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

उठ रहा तूफ़ान, कैसे
देश की नैया बढ़ेगी ?
आज तक तो तुम लगाते
ही रहे नैया किनारे ।

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

एक खेता है इधर को,
दूसरा खेता उधर को,
नाव डगमग डोलती है
हँस रहे हम पर सितारे ।

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

जो दिया तुमने उसी को
बाँटने में लड़ पड़े हम,
राह आगे की गए हैं
भूल हम सैनिक तुम्हारे ।

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

मुक्ति पाकर भी न किस्मत
देश को सुधरी अभी तक,
दुर्दशा ऐसी हुई है
जीत कर मैदान हारे ।

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

एक दो मल्लाह हैं जो
राह चलते हैं तुम्हारी,
आज भी हमको बचाते
हैं तुम्हारे ही इशारे ।

आज तक चलते रहे हैं
हम तुम्हारे ही सहारे ।

४७. अभय

भय न था मन में मरण का
चाह थी बलिदान की।

पड़ रसातल में पतन की
जिंदगी हम जी रहे,
राह दिखलाई नई
तूने हमें उत्थान की।

भय न था मन में मरण का
चाह थी बलिदान की।

हार में हारा नहीं तू,
जीत में जीता नहीं,
थी नहीं गिरि मान का चढ़
गंध भी अभिमान की।

भय न था मन में मरण का
चाह थी बलिदान की।

मोल वैभव ले न पाया,
बल न पाया लूटने,
मानता तेरा हृदय था
बात बस भगवान की।
भय न था मन में मरण का,
चाह थी बलिदान की।

जुल्म के वृश्चिक निरंतर
ही तुम्हें डसते रहे,
म्लान हो पाई न तब भी
ज्योति मृदु मुसकान की।
भय न था मन में मरण का,
चाह थी बलिदान की।

छिप गया, पर ज्योति फिर भी
दे रहा जग-चन्द्र को,
लालिमामय है कथा
युग-सूर्य के अवसान की।
भय न था मन में मरण का
चाह थी बलिदान की।

४८. दीप-निर्वाण

काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला।

हर जगह गांधी दिखाई
दे रहा है पथ दिखाना,
भस्म कर पाई नहीं
तुझको चिता की तीव्र ज्वाला।

काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला।

विश्व-गंगा में अमृत - से
बोल तेरे बह रहे हैं
स्नान कर उसमें किसी का
रह सकेगा दिल न काला।

काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला।

हो गए हैं हाथ ओझल
जो अमृत का पात्र भरते,
किंतु प्रस्तुत सामने
पीयूष से भरपूर प्याला ।
काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला ।

तोम मय संसार में हैं
शब्द अब तक जगमगाते,
नील नभ में है चमकती
जिस तरह नक्षत्र-माला ।
काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला ।

तू अमरता का धनी था
मौत ने तेरा किया क्या,
मार कर इंसान ने तुझको
स्वयं को मार डाला ।
काल के कर्कश करों ने
दीप पावन तोड़ डाला ।

४९. अमर जीवन

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

दीप को बुझते हुए देखा,
अँधेरा भी हुआ है;
किंतु प्राणों में प्रखरतर
तू उजाला भर गया है।

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

अब अधर हिलते नहीं हैं,
कंठ भी गाता नहीं है,
किंतु मुखरित मौन जग में
भर मधुर तू स्वर गया है।

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

छीन सकती मृत्यु कैसे
युग-पुरुष की रूह युग से,
ज़िदगी की भेंट दे तू
कर हृदय में घर गया है।

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

तू इशारा कर गया है,
तू इशारा कर रहा है,
कौन कहता है कि जग को
छोड़ कर रहबर गया है।

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

विश्व सारा देह तेरी
और तू जग-चेतना है,
प्राण का बलिदान दे
इंसान बन ईश्वर गया है।

मर गया है किंतु जीवन
को अमर तू कर गया है।

५०. मान हिंदुस्तान का

प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

मूर्खता समझी कि तू था
शत्रु हिंदुस्तान का,
पर तुझे हर साँस में
था ध्यान हिंदुस्तान का।

प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

वेदना से विश्व सारा
उस दिवस व्याकुल हुआ,
विश्व को गांधी रहा
वरदान हिंदुस्तान का।

प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

नाम गांधी का चमकता
ही रहेगा सूर्य-सा,
रोशनी देगा सदा
बलिदान हिंदुस्तान का ।
प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

प्रेम से बढ़कर न कोई
शक्ति है संसार में,
कर गया तू प्रीत से
जय - गान हिंदुस्तान का ।
प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

जन्म गांधी को दिया,
पर वार घातक भी किया,
इसलिए शरमायगा
अभिमान हिंदुस्तान का ।
प्राण तेरे ले बढ़ा क्या
मान हिंदुस्तान का ?

५१. प्रेम का पुजारी

प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

खून तूने राष्ट्र की प्रिय
भूमि को अपना पिलाया,
रह सके जिससे युगों तक
राष्ट्र की आबाद क्यारी ।

प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

प्रीत के हथियार से था
राज-सत्ता को हराया,
प्रीति की ही शक्ति से
आज़ाद की धरती हमारी ।

प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

दासता से मुक्ति पाकर
स्वार्थ के वश में हुए हम,
इसलिए ही रात-दिन
तूने रखा संग्राम जारी ।
प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

धर्म का ले नाम होली
खेलते थे खून की हम,
पर गुँजाता ही रहा तू
प्रेम की आवाज़ प्यारी ।
प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

राष्ट्र को उन्नत बनाने
को किया तप ज़िंदगी - भर,
थी विषम तूफ़ान में भी
एक क्षण हिम्मत न हारी ।
प्रेम पर बलि हो गया तू
प्रेम का पागल पुजारी ।

५९. स्वप्न-दर्शी

स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

राम के शासन-सदृश
आदर्श शासन देश का हो,
चित्र पूरा हो न पाया,
चल दिया पहले चितेरा।

स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

देश ने स्वाधीन होकर
दीप - मालाएं जलाईं,
पर मिटा पाए न अब तक
जिंदगी का हम अँधेरा।

स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

दोष तेरा कुछ नहीं,
करवट बदल कर सो गए हम,
था किया तूने जगत् में
सूर्य बनकर शुभ सवेरा।
स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

शत्रु को करके पराजित
शत्रु अपने बन गए हम,
लालसाओं का हृदय की
तोड़ पाए हैं न घेरा।
स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

राष्ट्र को दी ज़िंदगी तूने
ज़हर हम दे रहे हैं,
ज़िंदगी में दे रहे हैं
मौत को हम खुद बसेरा।
स्वप्न-दर्शी, स्वप्न सुन्दर
हो न पाया पूर्ण तेरा।

५३. अंतिम दृश्य

मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

प्रेम का पथ त्याग करके
हो गई हैवान दुनिया,
सिर्फ़ गांधी ही रहा तब
एक हठ का, एक रट का।

मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

चाह थी तेरी अनोखी
राह थी तेरी अनोखी,
पर निराला ही दिखाया
दृश्य अंतिम चित्रपट का।

मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

आँसुओं की बह पड़ी
जमुना नई जमुना किनारे,
जब चिता पर था चढ़ाया
शव अमर वर वीर भट का।
मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

चीखने लपटें लगीं शव
से लिपटकर जब चिता की,
रो पड़ी हिंसा निरखकर
दृश्य जमुना के निकट का।
मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

ज्योति जगमग भर जगत् में
कर गया प्रस्थान है तू,
इस प्रभा में सत्य का पथ
पा सकेगा विश्व भटका।
मौत का तेरे हृदय को
एक क्षण भी था न खटका।

५४. माली !

लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

परिश्रम कर कठिन तुमने
चमन सरसब्ज कर पाया,
लगाना चाहते हैं हम
उसी में आग, हे माली !

लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

जहाँ कलियाँ चटखती हैं,
जहाँ पर फूल खिलते हैं,
वहीं पर पालते हैं हम
विषैले नाग, हे माली !

लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

इसी उद्यान में जन्मा
तुम्हारा प्राण-घातक भी,
युगों तक बाग़ के उर में
रहेगा दाग़, हे माली !
लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

लिखे उद्यान के हर पत्र
पर तुमने हृदय के स्वर,
गए हम भूल फिर भी तो
तुम्हारा राग, हे माली !
लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

जिसे पाला पिला लोहू
स्वयं अपने कलेजे का,
उसे किसके भरोसे पर
गए हो त्याग, हे माली !
लगे बर्बाद करने हम
तुम्हारा बाग़, हे माली !

५५. तम की ओर

भर लिया फिर स्वयं ही
देश में हमने अँधेरा ।

सत्य की किरणें चमकतीं
थीं समुज्ज्वल लोचनों में,
रात-दिन के बंधनों से
मुक्त था अस्तित्व तेरा ।

भर लिया फिर से स्वयं ही
देश में हमने अँधेरा ।

रोशनी की भाँति सारे
विश्व की सम्पत्ति था तू,
था कहा अंतिम घड़ी भी,
"शत्रु भी है मित्र मेरा ।"

भर लिया फिर से स्वयं ही
देश में हमने अँधेरा ।

देश को आज़ाद करने
के लिए लड़ता रहा तू,
पर किसी को भी बनाना
चाहता था तू न चेरा।
　　　　भर लिया फिर से स्वयं ही
　　　　देश में हमने अँधेरा।

मुक्त कहने को हुए, पर
दास स्वार्थों के बने हम,
इसलिए फिर से कुचक्रों
ने दिया है डाल डेरा।
　　　　भर लिया फिर से स्वयं ही
　　　　देश में हमने अँधेरा।

देश को तू पार लाता
था निराशा की निशा से,
वार तुम पर ही किया जब
दे दिया तूने सवेरा।
　　　　भर लिया फिर से स्वयं ही
　　　　देश में हमने अँधेरा।

५६. अमावस

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

भीड़ भारी है गगन में
जगमगाते तारकों की,
पर बिना शशि के प्रकाशित
हो न पाता पंथ काला ।

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

कुछ उरों में जगमगाहट,
शेष में गहरा अँधेरा ।
कौन कहता विश्व-भर में,
भर रहे दीपक उजाला ?

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

टिमटिमाते दीपकों से
राह मिलती है न राहत,
स्नेह में स्नेही हृदय ने
स्नेह प्राणों का न ढाला ।

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

इस नशीली ज्योति पर क्यों
हो गया मन मुग्ध जग का,
मौत का प्याला पिलाने
आ गई है ज्योति-बाला ।

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

तुम गए आई अमावस,
तुम रहे तो पूर्णिमा थी,
था तुम्हारी मृदु हँसी में,
रंग ज्योत्स्ना-सा निराला ।

क्या अमावस की निशा को
ज्योति देगी दीप-माला ?

५७. चरण-चिह्न

चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों - से जल रहे हैं।

पातकों के पंक में भ्रम-
वश कभी फँसते नहीं वे,
जो तुम्हारी लीक पर रख
पाँव अविचल चल रहे हैं।
चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों - से जल रहे हैं।

लोक तीनों काल तीनों
थे तुम्हारे दृष्टि-पथ में,
हम तुम्हें पागल समझ
बनते स्वयं पागल रहे हैं।
चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों - से जल रहे हैं।

छोड़कर क्यों पथ तुम्हारा
खोजता जग राह नूतन,
इन प्रयत्नों से जगत् में
बन नए दल दल रहे हैं।
चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों-से जल रहे हैं।

छोड़कर दुनिया उजाला
क्यों तिमिर की ओर जाती,
सत्य से मुँह मोड़कर हम
क्यों स्वयं को छल रहे हैं।
चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों-से जल रहे हैं।

कवि-हृदय की कल्पना को
ज्योति तुमसे मिल रही है,
स्वप्न के उसके हृदय में
खिल विमल शतदल रहे हैं।
चिह्न चरणों के तुम्हारे
दीपकों-से जल रहे हैं।

५८. संवेदनामय

कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी।

विश्व में सबसे अधिक
संवेदनामय कवि-हृदय है,
किंतु कवि ने भी न पाई
वेदना बापू तुम्हारी ।
कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी ।

दीप बुझ जाता सबेरे,
रात-भर देकर उजाला ।
पर न बुझना जानती थी ,
साधना बापू तुम्हारी ।
कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी ।

मेघ आते हैं गगन में,
रिक्त हो जाते बरसकर,
पर सतत झरती दया की
भावना बापू तुम्हारी ।
कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी ।

जो न थकना जानती हो,
जो न रुकना जानती हो ।
क्या मिलेगी कवि-हृदय को
चेतना बापू तुम्हारी ।
कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी ।

चाहता है कवि गुँजा दे
विश्व-भर में गीत गाकर ।
विश्व के कल्याण की शुचि
कामना बापू तुम्हारी ।
कर रहा कवि का हृदय
आराधना बापू तुम्हारी ।

५९. प्रीत-पिचकारी

याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

बाँसुरी की साँस में
संगीत का सौरभ लुटा दे,
श्वास में कवि के अगर
खिल जाय फुलवारी तुम्हारी ।
याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

दे महक कवि का हृदय भी
जिस तरह केसर महकती,
यदि खिले उसके हृदय में
भाव की क्यारी तुम्हारी ।
याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

पूर्णिमा रक्खे धरा पर
रात होने दे न काली,
कवि - हृदय वरदान में
पा जाय उजियारी तुम्हारी ।
याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

खेलने दे विश्व को कवि
रक्त की होली न निर्मम,
कवि - हृदय पा जाय पावन
प्रीत - पिचकारी तुम्हारी ।
याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

कवि न होने दे किसी की
ज़िंदगी का अन्त असमय,
लोचनों को यदि मिले
पीयूष की झारी तुम्हारी ।
याचना कवि की कि दे दो
एक चिनगारी तुम्हारी ।

६०. यश-गान

कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।

साँस कवि की रुक रही थी,
बाँसुरी कैसे बजाता ?
पर तुम्हारी याद ने दी
श्वास को फिर से जवानी।
कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।

स्पर्श पा पावन तुम्हारा
कीर्ति के अक्षर हँसेंगे,
गीत तारों से खिलेंगे
मुसकराएगी कहानी—।
कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।

छन्द में कवि ने भरे कुछ
बिंदु तव यश-सिंधु से ले
ताप प्राणों का बुझा लें
विश्व के अनुतप्त प्राणी।
कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।

नित्य-नूतन सूर्य-शशि हैं,
नित्य-नूतन हैं सितारे।
कीर्ति-गाथा भी तुम्हारी,
हो न पाएगी पुरानी।
कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।

तुम तुम्हारे पुण्य से
संसार में जीवित रहोगे,
छवि तुम्हारी आँककर
कवि आँकता अपनी निशानी।
कवि तुम्हारे गीत गाकर
कर रहा है धन्य वाणी।